मैं इंसान हूं, इज्ज़त से जीना चाहती हूं

जुही

साधारण मध्यम वर्गीय परिवार में पैदा हुई थी आसो। सात भाइयों की अकेली बहन। पर फिर भी बेटी की जात थी। बोझ कहलाती, ताने सुनती बड़ी होने लगी। विधवा मां ने जोर देकर पांच क्लास तक पढ़ा दिया। फिर भाई न माने। गाय की तरह ननकू के खूंटे बांध दिया।

शादी के पहले दिन से ही ननकू ने रंग दिखाना शुरू कर दिया। अपने घर ले जाने के बजाय अपने कुछ दोस्तों के पास ले गया। आसो को उनमें से एक के साथ घर जाने को कहकर खुद शराब पीने बैठ गया।

शादी का पहला दिन। नौ साल की बच्ची क्या कहती। चुपचाप चल पड़ी। अभी कुछ दूर ही पहुंची थी कि उस आदमी ने उसके साथ छेड़छाड़ करनी शुरू कर दी। आसो घबरा गई। जोर-जोर से रोने लगी। चीख-पुकार से डरकर वह आदमी भाग गया।

बात आई-गई हो गई। आसो का पति उसे घर ले गया। पर वह था तो आखिर कसाई। उसने शादी तो बस नाम के लिए की थी। उसे तो एक नौकरानी चाहिए थी।

दिन गुजरते रहे, आसो जवान हुई। पर ननकू के लिए उसके दिल में जगह कभी नहीं बनी। बनती भी कैसे। वह तो नाम का पति था। नकारा, जिद्दी, बात-बात पर गाली-गलौज करने वाला। न कमाता, न सहारा देता। बस, आसो की कमाई पर खाता। उसके गहने बेच कर शराब पीता, दावतें उड़ाता।

भला कोई ऐसे पति के साथ कैसे निभा सकता है। आसो का जी उकता गया था। रोज की मार अब सहना उसके बस में नहीं था। पर वह क्या करती। किसे दुख सुनाती। मां का तो अपना ही ठिकाना नहीं था, उससे क्या सहारे की आस लगाती।

सात साल गुजर गये। आसो के दो बच्चे भी हो गये।

हिम्मत बढ़ी

उम्र बढ़ने के साथ-साथ आसो की समझ और हिम्मत दोनों बढ़ीं। उसने ऐसी शादी मानने से इनकार कर दिया। कहने लगी, पहले जो कदम उठाना था, आज वो उठा पाई हूं। यह शादी तो गुड्डे-गुड़िया का खेल था। मेरी पसंद की नहीं थी। मैं इसे नहीं मानूंगी।

पर आसो को यह नहीं मालूम था कि पूरा समाज उसके खिलाफ हो जाएगा। गांव वाले उसे

बेहया, आवारा कहेंगे। उसे यह संघर्ष अकेले लड़ना होगा। उसने सोचा था, सब उसका साथ देंगे। ननकू सुधर जाएगा जब गांव पंचायत का दबाव पड़ेगा।

पंचायत का फैसला

ननकू ने पंचायत बैठाई। अपनी औरत की बेरुखी और गांव की इज्ज़त पर चोट की। अपनी लाचारी की दुहाई दी। आसो ने भी पंचों को अपनी कहानी सुनाई। जरा तो सोचो-समझो। मुझे मुक्ति दिला दो। पर पंच कौन थे। ननकू जैसे मर्द। अगर वह आसो की बात मान लेते तो कल सारी औरतें बागी हो जाएंगी। उनकी तानाशाही कैसे चलेगी?

पंचों ने निर्णय सुनाया। चाहे जो भी हो, आसो को ननकू के साथ ही रहना पड़ेगा। पति परमेश्वर होता है। उसके घर से औरत की अर्थी जाती है। आसो बहुत चीखी-चिल्लाई पर किसी ने उसकी एक न सुनी।

ननकू उसे घसीटता हुआ चौपाल से घर तक ले गया। घर ले जाकर खूब मार-पीट कर उसे बंद कर दिया। पर आसो को किसी भी हाल यहां रहकर यह अन्याय सहना मंजूर नहीं था। उसने तय कर लिया, वह इस नर्क में नहीं रहेगी। हार नहीं मानेगी।

कुछ साल और गुजरे। आसो ने इस बीच एक और नयी तरकीब निकाली। मन में ठान ली मैं पढ़ूंगी। लोगों ने दांत तले अंगुली दबा ली। पंचायत बैठी। उसने शर्त रखी। या तो ननकू के साथ नहीं रहूंगी या पढ़ने जाऊंगी। लाख समझाया, आसो डटी रही। गांव के केंद्र में वह पढ़ने लगी। मास्टरनी की मदद से दसवीं पास की। बारहवीं का फार्म भरा। ननकू उसे अब भी मारता-गाली देता। पर जैसे-जैसे उस पर जुल्म-दबाव बढ़ता, उसके इरादे पुख़्ता होते जाते।

कुछ और समय बीता। आसो ने अब तक बी.ए. पास कर लिया था। ननकू अब उसे ज्यादा कुछ नहीं कहता था। शराब ने उसे खोखला कर दिया था। वह सोचता, यह तो ढीठ हो गई है। मैं क्या करूं। आसो को घर से वह निकाल नहीं सकता था। काम कौन करता, कमाता कौन। मन ही मन उसे यह भी लगता था कि अगर आसो न होती तो उसका घर बिखर गया होता। पर था पुरुष ही। अहं जुबान का पहरेदार। कह देता तो मर्द कैसे कहलाता।

आसो का संकल्प

समय ने पलटा खाया। एक रात शराब पीकर ननकू सड़क पर चल रहा था। एक ट्रक से टकरा गया। टांग की हड्डी टूट गई। कुछ लोग उसे अस्पताल ले गये। आसो ने उसका इलाज करवाया। खूब देखभाल की। ननकू ठीक हो गया। उसे शर्मिंदगी भी थी। उसने आसो से माफी मांगी।

पर आसो टस से मस नहीं हुई। बोली, तुम्हारा इलाज कराना मेरा फर्ज़ था। पर तुम्हारे साथ मैं हरगिज़ नहीं रह सकती। पंचायत ने इस दफ़ा उसे प्यार और ममता का वास्ता दिया। उसे औरत का धर्म समझाया।

पर आसो अपनी मांग पर डटी रही। उसने दोहराया, मैं ननकू के साथ नहीं रहूंगी। पंद्रह साल तक दुख सहती रही। अब घुट-घुट कर नहीं जीऊंगी। समाज ने उसे बच्चों का वास्ता दिया। कहा, ननकू बेटे रख लेगा।

"न दे। मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं अपना कमा कर खा लूंगी। मुझे पति, बच्चे नहीं चाहिए। अपना सुख, चैन, इज्ज़त चाहिए।" आसो की इच्छा के आगे समाज को घुटने टेकने पड़े। पंच जान गए थे, उसे अब रोकना संभव नहीं। उन्होंने आसो को आजाद कर दिया।

आज नौ साल की आसो अट्ठाइस साल की है। मैं दस साल बाद उस से मिली थी। आज वह एक सरकारी स्कूल में नौकरी करती है। खुश और संतुष्ट है। एक सवाल जो मेरे मन में दबा पड़ा था, आज मैंने पूछ ही लिया। आसो, ननकू ने तो अपनी गलती मान ली थी, फिर तू उसके साथ क्यों नहीं रही। तेरे बच्चे तेरी आंखों के सामने रहते।

"दीदी, मेरा मन खट्टा हो चुका था। पहले मैं अपने पति से डरती-दबती थी। फिर वह मुझसे दबने लगा। जीवन की गाड़ी तो बराबरी के पहिए हों तभी सरपट चलती है। नहीं तो हिचकोले लगते रहते हैं। अपना स्वाभिमान खोकर मैं रहना नहीं चाहती थी। अगर उस पल मैं रुक जाती तो कोई भी औरत अपने पति के अत्याचार का विरोध कर अपनी जिंदगी नए सिरे से शुरू नहीं कर पाती। मर्द माफी मांगता रहता, औरत देवी बनी रहती। इंसान नहीं बन पाती। ऐसे चुपचाप, बिना पूंछ-सींग हिलाए हम भी जीने लगें तो जानवर जीते हैं। इंसान नहीं। और इस समाज को औरत को इंसान बनकर सुख, चैन और इज्ज़त से जीने का हक़ देना ही होगा।"

आसो तो चली गई। पर मैं हतप्रभ रह गई।

□